संसदीय लोकतंत्र अथवा लोकतांत्रिक संसद

स्वतंत्रता के बहुत पूर्व यह आम धारणा थी कि भारत मे ईसाइयो की अपेक्षा मुसलमान ज्यादा खतरनाक है। उस समय स्वतंत्रता की कोई सभावना नही दिखती थी और इस्लामिक विस्तारवाद से सुरक्षा आवश्यक थी । इसलिये बहुत से लोग अंग्रेजो के साथ सहानुभूति रखते थे । ऐसे लोगो मे अनेक हिन्दू धार्मिक नेता माने जाते है जिनमे विवेकानंद भी शामिल है। ऐसे ही वातावरण मे एक विचारक हेडगेवार जी ने संघ का कार्य शुरू किया। इसका मुख्य कार्य इस्लाम के विरूद्ध हिन्दू जागरण था। इस समूह के समक्ष इस्लाम तो प्रत्यक्ष खतरा था और स्वतंत्रता की कोई संभावना नही थी इसलिये इस गुट को हिन्दू समाज मे बहुत समर्थन और सहयोग मिला। कालांतर मे स्वतंत्रता की मांग जोर पकडती गयी और इस जोर ने हेडगेवार जी के प्रयत्नो से भी आगे बढकर सफलता प्राप्त की। हेडगेवार जी के समूह ने भरसक प्रयत्न किया था कि स्वतंत्रता की लडाई मे भी मुसलमानो से दूरी बनाकर रखी जाये। किन्तु गांधी के समक्ष वे कमजोर पडे।

भारतीय संविधान जब बना। उस समय की परिस्थितियां ऐसी नही थी जैसी आज है। स्वतंत्रता संघर्ष का नेतृत्व करने वाले गांधी के प्रति संपूर्ण भारत मे अगाध श्रद्धा और विश्वास था। उनके साथ दो प्रकार के लोग थे। एक जो निःस्वार्थ थे। छल कपट रहित थे दो जो स्वतंत्रता का आभाष होतें ही तिकडम करने लग गये थे। पहले प्रकार के लोग क्षमता मे कमजोर थे तथा दूसरे प्रकार के लोगो की छमता पर्याप्त थी। पहले प्रकार लोगो मे राजेन्द्र प्रसाद विनोवा भावे आदि को माना जा सकता है। खान अब्दुल गफ्फार खान को माना जा सकता है तो दूसरे प्रकार मे नेहरू पटेल अम्बेडकर और जिन्ना सरीखे लोगो को। पहले प्रकार के लोग धोखा खा सकते थे, दे नही सकते थे। दूसरे प्रकार के लोग धोखा दे सकते थे खा नही सकते थे। पहले प्रकार के लोग राष्ट्र भाव से ओत प्रोत थे तो दूसरे प्रकार के लोग अपना राजनैतिक स्वार्थ अधिक देख रहे थे। दूसरे प्रकार के लोग संविधान निर्माण मे हावी हो गये और पहले प्रकार के लोग धोखा खा गये । उस समय की परिस्थितियों मे इसके अतिरिक्त कुछ और करना संभव नही था, इसलिये जो भी हुआ वह हम सबकी मजबूरी थी कि पूरा देश इन सबसे धोखा खा गया। वास्तव मे भारत का वर्तमान संविधान उस समय की परिस्थितियो मे चाहे जैसा भी अच्छा बना हो किन्तु जल्दी ही आभास हो गया कि वह संविधान समस्याओ के समाधान के लिये अपर्याप्त भी है और वाधक भी किन्तु उक्त संविधान दूसरे प्रकार के राजनेताओ के लिये अमृत तुल्य था। इसलिये ये सब नेता मिलकर धर्म जाति का भेद भूलकर इस संविधान को धर्म ग्रन्थ मानने लगे। पहले प्रकार का समूह कुछ नही कर सका । यहा तक कि प्रहले प्रकार के समूह मे धीरे धीरे निराशा का भाव बनने लगा । उनकी संख्या घटने लगी। परिणाम यह हुआ कि लगभग सारी की सारी राजनीति एक पेशा बन गयी, और पहले प्रकार के लोगो का अस्तित्व ही संकट मे आ गया। स्वतंत्रता के तत्काल बाद ही संघ परिवार को आभास हुआ कि वे अपने संघर्ष मे अकेले पड गये। इसलिये उन्होने तुरंत ही अपनी दिशा बदल ली। प्रारंभ से ही संघ परिवार लोक तंत्र के खिलाफ था। उसे गांधी का लोकतंत्र इतना नापसंद था कि लोकतंत्र का विरोध करते करते संघ परिवार गांधी विरोधी बन गया। स्वतंत्रता के बाद उसने अपना मार्ग बदला और लोकतंत्र की पूँछ पकडकर लोकतंत्र से पिंड छुडाने का ताना बाना बुनने लगा। एक तरफ स्वार्थी नेता एक प्रदूषित संविधान के द्वारा एक ऐसी प्रणाली को लोकतंत्र कहकर प्रस्तुत कर रहे थे जो भारत के आम नागरिको को कष्ट देती थी। यहा तक कि कभी कभी तो वे गुलामी काल को ही वर्तमान काल से अच्छा मानने लगते थे तो दूसरी ओर संघ परिवार वर्तमान अव्यवस्था को लोक तंत्र की असफलता सिद्ध करके स्वयं को बढाता रहता था। ऐसे वातावरण मे आज भारत लोकतंत्र को ही असफल मानकर नरेन्द्र मोदी की तानाशाही की तरह झुक रहा है। अन्यथा कोई कारण नही है कि भारत की जनता लोकतंत्र के स्थान पर किसी तानाशाही को पसंद करे।

सच बात तो यह है कि भारत मे संसदीय लोकतंत्र होना ही नहीं चाहिये था, बल्कि संसदीय लोकतंत्र की जगह लोकतांत्रिक संसद होनी चाहिये थी जैसा गांधी जी मानते थे या जयप्रकाश भी मानते रहे, और वर्तमान मे कुछ कुछ अन्ना हजारे भी समझते है। संसदीय लोकतंत्र मे संसद सर्वोच्च होती है और संसद ही संविधान का संचालन करती है। अर्थात सबसे उपर होती है। उसके नीचे संविधान, संविधान के नीचे न्यायपालिका और कार्यपालिका और इन सबसे नीचे देश

का नागरिक जो संसद सदस्यो के निर्वाचन तक अपनी भूमिका सीमित रखता है। इसके विपरीत लोकतांत्रिक संसद होती है। जिसमे सबसे उपर होता है समाज, उसके नीचे होता है संविधान और संविधान के नीचे विधायिका कार्यपालिका और न्यायपालिका। लोकतांत्रिक संसद मे विधायिका कार्यपालिका तथा न्यायपालिका के समान अधिकार होते है जबकि संसदीय लोकतंत्र मे संसद को विशेष अधिकार प्राप्त है। भारतीय राजनेताओ ने इस संसदीय लोकतंत्र का भरपूर दुरूपयोग किया है। भारत का संविधान स्वतंत्रता के समय ही अल्प वयस्क था और धीरे धीरे उसे मजबूत होने की आवश्यकता थी किन्तु संविधान तो स्वतंत्रता के शीध्र बाद ही संसद की जेलो मे डाल दिया गया । संसद ने जेल खाने मे बंद हमारे संविधान का भरपूर दुरूपयोग किया। भारत का संविधान भारतीय संसद के दाहिने हाथ मे ढाल के रूप मे काम आता रहा। और बायीं मुठठी मे कैद रहा। हमारे नेताओ ने जब चाहा तब संविधान मे मनमाना संशोधन करके न्यायपालिका विधायिका सामाजिक स्वतंत्रता आदि पर अंकुश लगाए और अपनी सर्वोच्चता सिद्ध करती रही। उसने मिडिया मे भी अपने चापलूस खडे किये, उन्हे अनेक प्रकार के आर्थिक विज्ञापन दिये गये । उन्हे अनेक प्रकार के सम्मान के प्रलोभन दिये गये। और बदले मे ये तथाकथित साहित्यकार मीडिया कर्मी विद्वान संसदीय लोकतंत्र से उपकृत होकर संसदीय लोकतंत्र के लिये तथा वर्तमान जेल के बंद संविधान के पक्ष मे भाट और चारण के समान गुणगान करते रहे। संघ परिवार कभी लोक तंत्र का समर्थक नही रहां। उसे इस बात की चिन्ता नही है कि संविधान को संसदीय जेल की चारदिवारी से मुक्त होना चाहिये बल्कि उसका तो मानना है कि यह असफल होती प्रणाली ही संघ के उत्कर्ष मे सहायक है। संघ परिवार येन केन प्रकारेण उस जेल का नियंत्रण अपने पास लेना चाहता है, जिसका नियंत्रण वर्तमान समय मे कुछ स्वार्थी तत्वो के पास है । स्पष्ट है कि संघ मे इमानदार लोगो की संख्या अधिक है। ये लोग कुशल प्रशासक भी हो सकते है, एक अच्छी सरकार सरकार भी चला सकते है। ऐसा लगता है कि वर्तमान दूषित लोकतंत्र की जगह इमानदार गुलामी भी अधिक अच्छी लगने लगी है। यदि वर्तमान अव्यवस्था और गुलामी मे से एक को चुनना हो तो भारत की जनता गुलामी को अधिक पसंद करेगी किन्तु यदि वर्तमान अव्यवस्था और लोकतांत्रिक संसदीय प्रणाली के बीच एक का चुनाव करना हो तो देश की जनता गुलामी तो पसंद करेगी ही नही बल्कि एक मत से लोकतांत्रिक संसदीय प्रणाली के पक्ष मे हो जायेगी। अन्ना हजारे के तूफान मे एक ऐसा ही उबाल दिखा था। किन्तु अन्ना अरविन्द की गलती से ही वह उवाल अंतिम परिणाम तक पहुचने के पहले ही भटक गया।

वर्तमान समय मे हमारे पास तानाशाही और संसदीय लोकतंत्र के बीच एक को चुनने की बात है और कुआ और खाई मे से एक मे गिरने का चुनाव करना है। कुछ न कुछ करना ही पडेगा। किन्तु अब समय आ गया है कि हम धीरे धीरे लोक स्वराज्य की दिशा मे बढना शुरू कर दे जिसका पहला चरण होगा लोकतांत्रिक संसद जिसे हमलोग भौतिक रूप से लोकसंसद कहते है। यहा से संघर्ष की शुरूआत होगी और 2019 आते आते यह संघर्ष कुछ परिणाम दिखायेगा । इसे न तानाशाह मोदी रोक पायेगे न वर्तमान स्वार्थी राजनेताओ का समूह । प्रयत्न जारी रखना चाहिये, अच्छे परिणाम की उम्मीद करनी चाहिये।

2 महिला सशक्तिकरण अर्थात संगठन शक्ति का दुरूपयोग

दिल्ली की एक अदालत मे न्यायाधीश कामीनी लाउ ने एक ऐतिहासिक फैसला देते हुए लिखा है कि सोलह दिसम्बर 2012 को हुए महिलाओं के प्रदर्शन से प्रभावित होकर सरकार ने जो कानून मे संशोधन किया वे संशोधन जल्दवाजी मे किये गये, गंभीरता से सोच समझकर नही किये गये। किसी महिला के पीछा करने को जितना गंभीर अपराध बनाया गया, वह उतना गंभीर अपराध नही होना चाहिये था। निर्णय मे कोई ऐतिहासिक बात नही है। फिर भी जिस वातावारण मे और वह भी एक महिला होते हुए कहा गया वह वास्तव मे ऐतिहासिक हिम्मत का काम है।

यह सच है कि भारत मे दो प्रतिशत संगठित लोग अठान्वे प्रतिशत असंगठित लोगो पर हावी हो जाते है। उनके छोटे से संगठन की सफलता से प्रभावित होकर कुछ असंगठित लोग न चाहते हुए भी उनके संगठन से जुड जाते है और धीरे–धीरे इन संगठित लोगो की संख्या 10–15 प्रतिशत हो जाती है। इतना संख्या विस्तार होते ही ये संगठन सरकार

और समाज को भी ब्लैकमेल करने लग जाते है। इस्लाम ने यही किया, संघ परिवार भी इसी राह पर चला, जातिवादी संगठन भी इसी मार्ग पर है, और कर्मचारी युनियन भी यही कर रहे है। इनकी सफलता को देख–देख कर कुछ उत्साही लोगो ने किसान संगठन भी बनाने शुरू कर दिये, और इन संगठनों की अंतिम कडी मे महिलाओ का संगठन मे शामिल हो गया। सच बात यह है कि संगठित महिलाओ का वर्तमान प्रतिशत अन्य महिलाओ की तुलना में एक प्रतिशत से भी कम है। इनका आचरण तथा सफल परिवार चलाने की योग्यता भी अन्य महिलाओं की तुलना मे कमजोर होती है। इन मुट्ठी भर महिलाओ ने चिल्ला–चिल्ला कर आसमान सर पर उठा लिया और सरकार उस चिल्लाहट को ही सारी महिलाओं की आवाज कहकर उनके प्रस्तावो को मान ली। नेताओ की मजबूरी थी कि ये एक दो प्रतिशत महिलाए संगठित थी, और अन्य असंगठित महिलाओ को प्रभावित कर सकती थी। ये महिलाऐं इतनी नाटकबाज होतीं हैं कि इनमें अन्य तरीको से भी नेताओ को प्रभावित करने की क्षमता हो सकती है।

यह एक सीधा सा सिद्धान्त है कि दो संगठित लोग दस असंगठित पर भारी पडते है, तो कभी–कभी तो ये सौ पर भी भारी पड जाते है। अगर इनकी संख्या पांच हो जाये तो इनकी शक्ति पांच सौ के बराबर हो जाती है। इनकी लगातार बढती सफलता से प्रभावित होकर कुछ लोग इनके साथ जुडने लग जाते है। ये लोग अपने समूह के असंगठितो का तो शोषण करते ही है। ये लोग संपूर्ण समाज का भी उस सीमा तक शोषण करते है जब तक कोई अन्य संगठित गिरोह इनके मुकाबले मे खडा न हो जाये। दो प्रतिशत संगठित महिलाओ के समक्ष अन्य कोई संगठन मुकाबले मे नही था। इन्होने मनमाना किया। सम्पूर्ण समाज भी झुक गया। सरकार भी झुक गयी। बाबा रामदेव सरीखे धर्मगुरू तथा अन्ना हजारे सरीखे समाज शास्त्री भी अपनी बैठको मे महिला सशक्तिकरण की बात करते है। वे यह नही समझते कि उनका कथन कितना ना समझी भरा है परिवार तो सशक्त हो सकता है। परन्तु परिवार मे कोई महिला और पुरूष अलग–अलग सशक्त कैसे हो सकते है यह बात किसी और के दिमाग मे नही है। इन दोनो के भी दिमाग मे नही है। मै चुनौती देता हूॅ कि वे मेरे इस कथन का प्रतिवाद करे कि– परिवार मे महिला और पुरूष का भिन्न–भिन्न कैसे अस्तित्व है। न्यायाधीश कामीनी लाउ ने महिला होते हुए भी इस खतरे को भॉप कर बहुत ही अच्छा सम्मान जनक कार्य किया है। अन्यथा मै तो वर्षो से देख रहा हूॅ कि अच्छी से अच्छी लेखिकायें भी यदि कोई लेख लिखती है तो उनका विषय महिला सशक्तिकरण के अलावा कुछ नही होता। ऐसा लगता है कि उनकी नजर मे यही एक मात्र समस्या है। मै तो आज कल आमतौर पर लेखिकाओ के लिखे लेखो के हेडिंग देखते ही कचरे की टोकरी मे डाल देता हूॅ। ए टू जेड चैनल मे कई बार जब इन विषयो पर बहस होती है, मेरे बगल मे दोनो ओर अनेक संगठनो की महिलायें प्रतिवाद करने के लिये बैठती है। वे कभी तर्क नही देती। समाधान नही देती। सिर्फ महिला उत्पीडन और महिला सशक्तिकरण तक सीमित रहती है। मै मानता हूॅ कि यदि वे बंद समाज की धारणा के विपरीत है, संगठित परिवार की अपेक्षा व्यक्ति स्वातंत्र की पक्षधर हैं, तो मै उन्हे बिल्कुल नही रोकूंगा वे स्वतंत्रता पूर्वक अपने रास्ते पर चल सकती हैं किन्तु उन्हे यह कोई अधिकार नही कि वे बंद समाज की पक्षधर महिलाओं के पारिवारिक जीवन मे हस्तक्षेप करे। उन्हे अपने किसी अंग–भंग से भगवान के दर्शन होते है तो उन्हे वह दर्शन करने की छूट प्राप्त है, किन्तु वे ब्लैक मेल करके दबाव डालकर नेताओ से कानून बनवाकर बाकी या शेष महिलाओ को अंग–भंग के माध्यम से भगवान का दर्शन करने के लिये बाध्य नही कर सकती। चैनल की बहस मे कई बार एंकर रामबीर जी ने महिलाओ के बीच मे मतदान तक कराया और खुले समाज के पक्ष की बाते आम तौर पर महिलाओ ने अस्वीकार कर दी लेकिन ये महिलए अपने स्वार्थ मे इतना डूबे रहती है कि इन बातो को नही समझती। मै मानता हूॅ कि महिलाओ मे संगठन की बीमारी बहुत बाद मे आयी है किन्तु मै यह भी मानता हूॅ कि अन्य संगठनो ने तो सिर्फ समाज ही को तोडा था। परिवार व्यवस्था इससे अछूती थी किन्तु अब महिला संगठनों ने परिवार व्यवस्था को तोडने की शुरूआत कर दी है। राजनेता स्वार्थ वश इनका साथ दे रहे है और धर्म गुरू नासमझी मे। मै तो यह भी देख रहा हूॅ कि आजकल युवाओ को संगठित करने की भी एक लहर चल रही है। चाहे वह मोदी जी का भाषण हो या राहुल जी का, सभी युवा सशक्तिकरण की बात करतें हैं। समाज के अन्य लोग उनके भाषणो को सुनकर तालिया बजाते है। मीडिया

कर्मी अपने स्वार्थ वश इस बात को आगे आगे बढाते है। साहित्यकार कलाकार भी इस आग मे रोटी सेंकतें हैं। कोई यह नही सोचता कि अगर इस तरह युवा और गैर युवा मे परिवार बटे समाज बटा तो इसमे घर किसका जलेगा।

यह भी विचारणीय है कि संगठनो की इस बात मे हम असंगठित लोग क्या कर सकते है । क्या हम भी संगठित हो जावे और इन संगठनो का विरोध करे। अथवा कोई और मार्ग है। मेरे विचार से संगठनो का विरोध करके उन्हे कमजोर करना बहुत कठिन है। नये संगठन बनाना भी घातक होगा । क्योकि नया संगठन पुराने संगठन से टकराने की अपेक्षा असंगठितों के शोषण मे लग जाएगा। मेरे विचार से तो इतना ही हो सकता है कि हम स्वयं को ऐसे संगठनो से दूर कर ले जो अपनी सुरक्षा की जगह अन्यो का शोषण करते हैं। दूसरे रूप मे हम प्रतीक्षा करे कि ये भिन्न भिन्न संगठन आपस मे ही कट मरेंगे। यदि संगठित मुसलमान और संघ के लोग आपस मे कटते मरते है तो हमे चिंता करने की अपेक्षा तटस्थ हो जाना चाहिये । यदि संगठित महिलाओ के विरोध मे पूरूषो का कोई संगठन बनता है तो हमे किसी संगठन मे शामिल होने की अपेक्षा स्वयं को तटस्थ रखना चाहिये और दोनो को कटने मरने देना चाहिये । ये संगठन आपस मे ही लडकर शेष समाज को शान्ति से जीने का अवसर देगें। मै गंभीरता पूर्वक आप पाठको से यह निवेदन करता हूॅ कि आप इस विषय पर अपनी प्रतिकृयाए दे। आपके विचार को पढकर मुझे सुविधा होगी। अंत मे मै न्यायाधीश कामीनि लाउ को धन्यवाद देता हूॅ और आशा करता हूॅ कि कुछ अन्य महिलाएं भी इस संबंध मे संगठन स्वार्थ से उपर उठकर सोचना शुरू करेंगी।

1 प्रश्नः– रविशंकर, भानुप्रतापपुर छ.ग.।

ज्ञानतत्व 284 अंक में कुछ बाते अच्छी लगी जैसे रमेश चौबे जी का प्रश्न जो प्रश्न नही, उत्तर ही था। उनका लिखना और आपके द्वारा उसे छापना दोनो ही सराहनीय है। आप अपनी कोई विचारधारा नही रखते ऐसा लगता है। आप कई विषयों पर अपनी बात को इतना गोल–मोल कर देते हैं कि उसे समझना मुश्किल हो जाता है। हो सकता है आप बहुत उॅची समझ रखतें हों जो हम कम समझ वालों के सर के उपर से निकल जाता है। नरेंन्द्र मोदी को चालाक कहना और उस चालाकी को बुरा बताना समझ से परे है। राहुल गॉधी को नासमझ और अयोग्य बताना और उसकी प्रशंसा करना, विश्वसनीय बताना आपकी कॉग्रेसी मनोदशा को प्रगट करता है। मैं भाजपा का अंधभक्त नही हूॅ परन्तु बचपन से कॉग्रेस का शासन देख रहा हूॅ। वे कहते वही है जो हम सुनना चाहते हैं परन्तु करते वही हैं जो वे करना चाहते हैं। राहुल गॉधी अनाडी नही एक पके हुए कॉग्रेसी है। उनका चाल–चलन वैसा ही है जैसा एक आम कॉग्रेसी का होता है। उनका एक विज्ञापन आ रहा है जिसमें राजीव आवास योजना की बात सुनकर एक बुजुर्ग कहता है–''हम ये सुन–सुन कर बुढढे हो गये'' यही हाल हम सबका है। अतः राहुल गॉधी को अनाडी ना समझें। नरेंन्द्र मोदी को शातिर ना कहें। पूर्वाग्रह छोडकर विचार करें तो सब स्पष्ट हो जायेगा। आप से मेरा प्रश्न यह है कि राहुल जो कहते हैं वो करते क्यों नही ? मुस्लिम हित की बात करके क्या साबित करना चाहतें हैं ? कोर्ट ने कहा है हिन्दु कोई धर्म नही है, यह केवल एक विचारधारा है, तो किसी विचारधारा को मानने वाला सॉम्प्रदायिक कैसे हो सकता है ? राजनीतिक सुचिता के लिए हिन्दु, मुस्लिम, गरीब, आदिवासी आदि समूहों में बॉटने की बात सबसे ज्यादा करने वालों को आप सॉम्प्रदायिक मानते हैं, या उसे जो किसी का नाम लिए बिना सबका हित करने मे लगे हुऍ हैं।

उत्तरः– आपने चार प्रश्न उठायें हैं–1. आपकी अपनी कोई विचारधारा नही है? 2. ऐसा लगता है कि आप कॉग्रेसी मनोदशा के हैं ? 3. राहुल गॉधी अन्य कॉग्रेसियों की तरह कहते कुछ हैं, करते कुछ हैं। 4. नरेन्द्र मोदी और संघ परिवार जो कहता है वही करता है

5. हिन्दू कोई धर्म नही है, एक विचारधारा है।

1 यह सही है कि मेरी अपनी कोई धार्मिक अथवा राजनैतिक विचारधारा नही है । मै कटटर हिन्दू हूॅ ब्राम्हण हूॅ, वानप्रस्थी हूॅ और मेरी यह मजबूरी है कि मै सिर्फ सत्य कहूॅ। मै प्रयत्न करता हूॅ कि किसी व्यक्ति के कुछ कार्यो को लेकर उसकी सम्पूर्ण

मानसिकता घोषित न करूं। हो सकता है यह मेरी कमजोरी रही हो किन्तु मै इसे उचित मानता हूॅ। मेरे विचार मे कोई भी व्यक्ति न अच्छा होता है न बुरा। हर व्यक्ति अपने से अधिक अच्छे से बुरा होता है और अपने से अधिक बुरे की अपेक्षा अच्छा होता है। दूसरे से तुलना करते समय किसी व्यक्ति को अच्छा या बुरा कहा जाता है।

मै हिन्दू हूॅ। मेरी विचारधारा भी हिन्दू है क्योकि मै किसी भी संगठन से जुडा हुआ नही हूॅ। जब कोई व्यक्ति किसी संगठन से जुड जाता है, तो वह उस संगठन के प्रति प्रतिबद्ध हो जाता है, अनुशासन मे बंध जाता है। हिन्दू एक विचार धारा है जिसका परिणाम हुआ हिन्दू किसी संगठन से नही जुड पाता और जुड जाता है तो वह साम्यवादी हो जाता है, मुसलमान हो जाता है, संघ परिवार का हो जाता है। किन्तु हिन्दू नही रहता, क्योकि हिन्दू किसी संगठन का सदस्य नही होता। विचारणीय तथ्य यह है कि बहुत प्राचीन समय मे विचार वान हिन्दुओ ने सारी दुनियां को वैचारिक मार्गदर्शन दिया। किन्तु शासन नही किया। गुलामी के कालखंड मे हिन्दू विचारधारा अवरूद्ध हुई स्वतंत्र चिंतन बंद हो गया। विचारधारा के स्थान पर संस्कार अधिक महत्वपूर्ण होने लगे। नये–नये पंथ और सांप्रदाय स्वयं को धर्म कहने लगे। किसी साम्प्रदायिक संगठन से जुडने के बाद भी वे लोग अपने को हिन्दू कहने लगे और तथा कथित हिन्दुओ के मन मे दुंनिया पर शासन करने की वैसी ही इच्छा बलवती होने लगी जैसे सांम्प्रदायिक मुसलमानो और ईसाइयो की है। मै समझता हूॅ कि हिन्दू विचारधारा सांम्प्रदायिकता को परास्त कर सकती है दुनिया मे अलग– थलग कर सकती है। हिन्दू विचारधारा मे जाति और वर्ण के नाम पर जन्म से ही योग्यता घोषित होने लग गई तो स्वाभविक है कि विचारधारा प्रदूषित हो गई, विचारो के स्थान पर राजा लोग मजबूत होने लगे, सत्ता के लिये लडने लगे, मुटठी भर संगठित मुसलमानो के गुलाम हो गये। स्वतंत्रता के बाद कुछ हिन्दुओ ने मुस्लिम सांम्प्रदायिकता से कमजोर पडने का कारण विचार प्रधानता और संगठन के अभाव को घोषित कर दिया और उन्होने साम्प्रदायिकता से लडने के लिये अपना अलग से साम्प्रदायिक संगठन बना लिया। मैने इस विषय पर बहुत सोचा है। और मै इस नतीजे पर पहुंचा हूॅ कि कुछ विचारवान लोग भी हिन्दुत्व को विचार के रूप मे प्रस्तुत करने लगे तो कोई कारण नही है कि इस्लाम या ईसाइयत इस विचार धारा का मुकाबला कर सके। संस्कारवान होना बुरा नही है। संस्कृति और संस्कारो का अपना महत्व है किन्तु संस्कृति और संस्कार विचारो से उपर स्थान नही रखते। मैंने अपने जीवन के 30–40 वर्ष इस कार्य मे लगाये थे कि संघ परिवार विचार मंथन को संस्कारो के साथ–साथ अलग से महत्व देगा। सन 2005–06 मे संघ परिवार से मेरा कई बार इस संबंध मे संवाद भी हुआ। विश्व हिन्दु परिषद के कार्यालय मे मेरा इसी विषय पर भाषण भी कराया गया, पत्र व्यवहार भी हुआ, अंत मे संघ परिवार ने यह घोषित किया कि संगठन सर्वोच्च है, अनुशासन सर्वोच्च है, प्राचीन समय मे कहे गये महापुरूषो के वचनों पर कोई भिन्न विचार नही हो सकता और यदि कोई भिन्न विचार रखता है तो उसका संघ परिवार मे कोई स्थान नही है। मेरा अब भी यह मानना है कि कुछ मुट्ठी भर उच्च विचारवान लोगो को यह अवश्य घोषणा करनी चाहिये कि हम मृत महापुरूषो के विचारो की देश, काल, परिस्थिति अनुसार समीक्षा करने की अपनी स्वतंत्रता नही छोड सकते। यही वास्तविक हिन्दुत्व है और यही ईस्लाम और ईसाइयत से हिन्दुत्व का अंतर है जिसमे न मुहम्मद साहिब और कुरान अंतिम पैगम्बर है न ईशु मसीह और बाइबिल।

आपने कुछ और प्रश्न पूछे है इन प्रश्नो के उत्तर ज्ञान तत्व 285 अंक मै आपको मिल गये होगे। यदि 285 अंक पढने के बाद भी आपका कोई उत्तर बच गया हो तो पुनः लिखियेगा। मै आपको अवश्य समझाने का प्रयास करूगा। क्योकि मुझे मालूम है कि आप संघ से जुडे नही है और आपको स्वतंत्र विचार करने की पूरी छूट प्राप्त है।

2. घनश्याम पाटीदार पो0– लिम्बावास मंदसौर म0प्र0

प्रश्न– मै आपके टी वी प्रोग्राम नियमित देख रहा हूॅ । पत्रिका भी नियमित मिल रही है। आपके टी वी प्रोग्राम की जातिगत व श्रमजीवी के अन्तर्गत बहस बहुत सटीक लगी। मै आपके विचारो से 100 प्रतिशत सहमत हूॅ। वास्तव मे इस आरक्षण रूपी राक्षस ने देश की प्रतिभाओ को पलायन पर मजबूर कर दिया है। जातिगत आरक्षण न होकर प्रतिभागत आरक्षण होना चाहिये।

अज्ञानी लोग देश चलायेगे तो आजाद हिंद देश मे गुलामो की तरह ही लोग रहेंगे। वर्तमान मे हमारा देश जातिगत राजनीति के गर्त मे जा चुका है, जहां से निकलना खूँखार शेर को पकडने के समान है।

उत्तर– मुझे खुशी है कि आप टी वी मे भी मेरे विचार सुनते है। वर्तमान समय मे ए टू जेड चैनल मे जो प्रोग्राम आता है उसमे प्रत्येक शुक्रवार की शाम 4:30 बजे, शनिवार को रात 8 बजे, रविवार रात 8 बजे और सोमवार को रात 8 बजे आता है। इसके अतिरिक्त प्रतिदिन रात्री 11:30 से यह कार्यक्रम प्रसारित होता है। इस तरह आप कभी भी देख सकते है। सभी कार्यक्रम एक बार मौलिक रूप से तथा दो बार पुनः प्रसारित होते है। मुझे उम्मीद है कि आप इसी तरह देखकर अपने विचार भेजते रहेंगे।

आरक्षण चाहे किसी भी प्रकार का हो वह पूरी तरह गलत है। चाहे आर्थिक आधार पर हो अथवा जातिगत आधार पर, क्योकि आरक्षण एक अधिकार बन जाता है। सुविधा नही। सुविधा मे सुविधा लेने वाला देने वाले के प्रति आभार व्यक्त करता है। किन्तु आरक्षण के लिये तो वह अधिकार समझकर विवाद करने पर उतर जाता है। प्रमुख कांग्रेसी नेता जनार्दन द्विवेदी जी ने आर्थिक आधार पर आरक्षण देने की बात उठाई है यह भी अभी तो अच्छा लगता है लेकिन बाद मे समस्याएं पैदा करेगा। आरक्षण सिर्फ एक बात पर होना चाहिये कि जो सामाजिक नियमो का पालन करते है अच्छे लोग हो उन्हे हर प्रकार का आरक्षण दिया जा सकता है तथा अपराधियो से छीना जा सकता है। इस तरह समाज मे शरीफ और बदमाश का विभाजन करके व्यवस्था चलाई जा सकती है।

3. अनवर मसीह, बस्ती, उत्तर प्रदेश

प्रश्न– आपका पत्र मिला। आप को स्पष्ट करते हुए यह कहना है कि आपको आपके पत्र का उत्तर भेज दिया हूँ। कुछ साथियों का पता भी भेजा हूँ। ज्ञानतत्व निरंतर मिलता है। आपकी स्पष्ट और निष्पक्ष सोच समाज के हर वर्ग को प्रभावित करती है। वैसे तो दुनिया में बहुत से विचारक, साहित्यकार और दार्शनिक हुये जिन्होनें समाज का मार्गदर्शन किया। सिर्फ गॉधी के दर्शन से कुछ बदलने वाला नही है। अन्य दार्शनिकों पर भी चर्चा होनी चाहिए।

उत्तर– दार्शनिक और विचारक समानार्थी शब्द होते है। दार्शनिक और विचारक तत्कालीन परिस्थितियों मे दीर्धकालिक समाधान खोजने का प्रयास करते है। वैसे आचार्य पंकज जी के बताये अनुसार दार्शनिक मे सिर्फ बुद्धि का समावेश होता है हृदय का नही। जबकि विचारक मे हृदय और बुद्धि का सामंजस्य होता है। इस संबंध मे मेरा कोई अनुभव नही है। इसलिये मै कुछ कहने की स्थिति मे नही हूँ। दोनो का चिंतन मस्तिष्क पर निर्भर करता है। हृदय उन्हे प्रभावित नही करता। दोनो ही अपने पूर्ववर्ति दार्शनिको के दर्शन को आधार बनाते है। किन्तु कभी नकल नही करते । दो विचार कभी एक नही होते और दो विचारको के विचार भी पूरी तरह एक होना संभव नही है। विचारक विरले ही होते है, कभी–कभी ही सफल होते है, करोडो की आबादी मे एकाध होते है। विचारक धन पद और प्रतिष्ठा के मोह मे नही पडते । विचारक कभी प्रचार तंत्र का सहारा नही लेते। विचारक विशेष परिस्थितियो को छोडकर असत्य का भी सहारा नही लेते और सांसारिक जीवनचर्या मे कम ही लिप्त होते है। लेकिन आवश्यकता नही कि वे परिवार से दूर रहे।

बहुत वर्षो के बाद गांधी एक विचारक हुए। गांधी का चिंतन मुख्य रूप से समाज व्यवस्था पर था। विनोवा भी आंशिक रूप से विचारक माने जा सकते है। किन्तु वे समाज शास्त्र की अपेक्षा धर्म शास्त्र की दिशा मे अधिक जुटे हुए थे। राम मनोहर लोहिया को भी हम एक साधारण विचारक कह सकते है किन्तु वे सिर्फ राजनीति शास्त्र की ओर ज्यादा झुके हुए थे। वर्तमान मे विचारको का अभाव हो गया हैं क्योकि बचपन से विचारक की प्रतिभा रखने वाले बालक किसी न किसी संगठन के द्वारा अपने साथ जोडकर संस्कारित कर दिये जाते है। जिसका अर्थ होता है विचार की दिशा से विचलन, क्योकि संस्कार विचार मे बाधक होते है। इस विचलन मे इस्लाम, साम्यवाद, संघ परिवार तो दिन रात लगे ही हुए है। किन्तु

गांधीवादी भी निरंतर यह प्रयास करते रहते है। इस विचलन का परिणाम होता है कि कोई नया विचारक जन्म नही ले पाता और यदि कोई उस दिशा मे आगे बढता है तो ये सब संगठन मिलजुल कर उस विचारक की राह मे रोडे टकराने का प्रयास करते है।

मै स्वयं इन परिस्थितियो से गुजर चुका हूॅ। जब संघ परिवार तक ने पूरी ताकत से विरोध किया। कभी कभी तो हिंसक प्रयत्न भी हुए। यहां तक कि गांधी वादियो के एक समूह ने भी मुझे अपमानित करने और नुकसान पहुचाने मे कोई कसर नही छोडी। यदि ठाकुर दास जी बंग चटटान की तरह मेरे साथ नही खडे होते तो ये तथाकथित गांधी का नाम लेने वाले व्यापारी मेरी बहुत दुर्दशा करते। अब मै इन सारे संकटो से उबर चुका हूॅ। मै लगातार अपने विचार स्वतंत्रता पूर्वक और हिम्मत से प्रस्तुत कर रहा हूॅ । मेरे अधिंकाश विचार गांधी विचार से मिलते जुलते है। मेरे अधिकांश विचार स्वामी दयानंद मार्क्स और लोहिया से भी प्रभावित है। किन्तु अनेक मामलो मे मै इन सबसे भिन्न भी हो जाता हूॅ। यहां तक कि गांधी से भी। संभव है कि कालांतर मे चिंतन करते करते मै अपने ही पुराने विचारो से अलग सोचना शुरू कर दूॅ किन्तु यह नई सोच चिंतन का विचलन नही मानी जायगी। मै देख रहा हूॅ कि आज तो स्वामी रामदेव भी अपने को विचारक ही कहते है। मै नही कह सकता कि उनको समाज शास्त्र का कितना ज्ञान है।

4 रविन्द्र सिंह तोमर गुना– म0प्र0

प्रश्न– मै ज्ञान तत्व पढता हूॅ तो मुझे स्मृति शेष गुरू शरण जी की याद आ जाती है, जिन्होने मुझे ज्ञान तत्व से जोडा। बैष्णव जन तो तेने कहिये का राजनैतिक विरोध करते हुए समाज मे जातीय भेदभाव कम करने और श्रम का महत्व बढाने का दायित्व डा अम्बेडकर जी ने उठाया था। उन्होने आज हिन्दुत्व का नारा लगाने वालो का विरोध करते हुए हरिजनो को संविधान के अनुसार अनुसूचित जाति/जनजाति मे बाटा था। कमंडल की राजनीति ने संरक्षण देकर पिछडा वर्ग बनाया। 1989 मे कमंडल बनाया जिसने दिसम्बर 1992 मे ढॉचा कहकर मस्जिद तोडी भी। हिन्दुत्व के नारे ने धर्म को समझने नही दिया है।

विदेशी लोगो द्वारा गढे गये हिन्दू शब्द को साम्प्रदायिक शक्तियो ने राजतंत्र की चापलूस मानसिकता मे बदला है। इस संबंध मे आपका क्या विचार हैं?

उत्तर–मै आपसे सहमत हूॅ कि अंबेंडकर जी ने श्रम का महत्व बढाने का दायित्व घोषित करके समाज को जाति और धर्म मे बाटने का ऐसा काम किया जो अन्ततोगत्वा समाज को तोडने का आधार बना। यदि अम्बेडकर जी की नीयत खराब नही होती तो कुकुरमुत्ते की तरह पैदा होते हिन्दुवादी संगठन भी पैदा नही होते। आज स्पष्ट दिखता है कि अधिंकाश सवर्ण अम्बेडकर जी की जय जयकार करते है क्योकि अम्बेडकर जी ने ही सवर्णो को यह अवसर दिया कि वे लम्बे समय तक अपनी सर्वोच्चता बनाये रखे। आज राम विलास पासवान, मायावती, डा उदित राज जैसे तथाकथित हरिजन अपने को हरिजन कहकर, सवर्णो को गाली देकर, मनु को गाली देकर और साथ ही सवर्णो के साथ समझौता करते है और इस तरह हरिजनो को ब्लैकमेल करके माल मलाई खाने का षडयंत्र करते रहते है। यह किसी से छिपा नही है। इन षडयंत्रकारियो को यह अवसर सिर्फ भीम राव अम्बेडकर ने दिया है। और इसलिये इन षडयंत्रकारियो के लिये यह आवश्यक है कि ये षडयंत्रकारी अंदर अंदर सवर्णो से समझौता करके और उपर–उपर गाली देने का नाटक करके अम्बेडकर को भगवान की तरह पूजते रहे और बुद्धिजीवी सवर्ण उपरी मन से आरक्षण को गाली देकर अंदर आरक्षण को जिंदा रखे और अम्बेडकर को भगवान की तरह मानते रहे। सत्ता के लालच मे स्वतंत्रता के पूर्व भी अम्बेडकर जी ने सब प्रकार की तिकडम की यहां तक कि गांधी जी का भी विरोध किया और फिर स्वतंत्रता के बाद भी जीवन भर वही ब्लैक मेलिगं करते रहे। अब ऐसे लोगो की पोल खोलने की आवश्यकता है जिन्होने श्रम सहायक का नाम लेकर श्रम शोषण का काम किया है।

5 सी पी सिंह, भ्रष्टाचार विरोधी मंच अम्बिकापुर

प्रश्न–ज्ञानतत्व के आखरी पृष्ठ पर श्री बजरंग लाल जी की अत्यंत महत्वपूर्ण सूचना प्रकाशित होती है ... संसद एक जेलखाना है जहॉ हमारा भगवान रूपी संविधान कैद है। भगवान को जेलखाना से मुक्त कराना हमारी सर्वोच्च प्राथमिकमता है . ....। यह सबके लिए सूचना है पर मेरे लिए यह बेहद गंभीर सूचना है। निश्चय ही संविधान जेल में कैद करने योग्य है क्योंकि यह पश्चिमी प्रजातंत्र का संविधान है जिसका दूर दूर तक संबंध भारतीय जनगण से नही है। भारत की अपनी भूमि है, अपनी भाषा है, अपने पेड़ पौधे और वनस्पति हैं, अपना नदी, सागर और पहाड़ है, भूमि पर बसने वाले लोग और जीव–जन्तु अपने हैं तब यह विदेशी प्रजातंत्र और संविधान अपने देश में क्यों? इस संविधान ने देश का दो नाम इंडिया और भारत रखा। आपने आज तक चीन, जापान, रूस, अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी आदि देशों का दूसरा नाम जानते हैं? आप इन देशों का दूसरा नाम नहीं जानते क्योंकि इन देशों का दूसरा नाम है ही नहीं, दुनिया मे भारत एकलौता देश है जिसके दो नाम हैं।

दो नाम है इसलिए हमारा दोहरा चरित्र है। हम अफसर है और भ्रष्ट हैं। इसलिए अपराधी है। हम राजनेता हैं पर बेईमान हैं। चूंकि बेईमान हैं इसलिए गलत काम ही हमारा स्वभाव है और हर गलत काम हम करते हैं। यह रूकेगा कैसे? प्रजातंत्र और संविधान के भीतर जाकर हमने इसमें तोड़ मरोड़ कर इसे अपने अनुकूल सुधार किया है।

हम भारतीय हो कर भी हमने संविधान निर्माण करते समय क्यों नही सोंच विचार किये कि भारतीय संविधान बनाने का शुभ अवसर मिला है तब हम भारत के जनगण के रहन–सहन, खान–पान, रीति–रिवाज के अनुसार सत्य, ईमान, न्याय और नैतिकता से निर्माण करें। संविधान का आधार स्तम्भ ही सत्य, ईमान, न्याय और नैतिकता होते है। संविधान तो सिर्फ चौथाई ही बनाया गया और तीन चौथाई इंग्लैण्ड के संविधान की हू बहू नकल कर दिया गया जिसमें अंग्रेजों का पुलिस कानून, वन कानून, नारकाटिक्स, राजस्व कानून आज भी भारतीय संविधान में है। समाज में दो बातें हैं एक सही और दूसरा गलत। समाज में गलत करने वाला अपराधी माना जाता है। गलत करने वाला चाहे वह कितना भी छोटी गलती करें वह अपराधी है। अपराध के दंड का निर्धारण समाज करे कि व्यक्ति को क्या दंड दिया जाये। संविधान बनाते समय पंच के मुँह से परमेश्वर बोलता है इस स्थापित विचार को हमारे संविधान निर्माता भूल गए क्योंकि वे पश्चिम में पढ़े लिखे अंग्रेजी बोलने वाले एडवोकेट थे। पुलिस केवल सामाजिक पंचायत के आदेश का पालन करती, तब हमें न्याय के लिए वर्षों इंतजार नहीं करना पड़ता।

6 जे जी ओबराय जयपुर राजस्थान

प्रश्न– आजकल बहुमत शव्द की बहुत चर्चा है। बहुमत तो उसे कहते है जब उस इकाई के आधे से अधिक मतदाता एकमत हो। यह कैसा बहुमत है कि जहां दलीय शासन पद्धति है। अर्थात दल का नेता पहले पांच लोगो की कमेटी मे बहुमत से प्रस्ताव पारित कर लेता है। उसके बाद 25 के बीच मे जाकर वही प्रस्ताव पारित हो जाता है। और वही प्रस्ताव आगे बढकर 100 लोगो के बीच मे पारित हो जाता है और अंत मे वही प्रस्ताव 543 की संसद मे जाकर पारित हो जाता है। संसद मे पारित यह प्रस्ताव पूरे देश की जनता के बहुमत का प्रस्ताव बताया जाता है, जो एक धोखा है क्योकि पांच लोगो के बहुमत ने जो कुछ तय किया वही एक प्रक्रिया बनाकर मतदाताओ के बहुमत तक घोषित कर दिया गया। राजस्थान मे 2008 के चुनाव मे बहुजन समाज पार्टी के 6 सदस्य चुने गये थे जो जीतने के बाद कांग्रेस मे शामिल हो गये और मंत्री बन गये । अब विधान सभा मे कांग्रेस का बहुमत हो गया जिसका अर्थ हुआ कि छः विधान सभाओ के सारे मतदाताओ का मत भी अपने आप कांग्रेस के साथ मिलकर मतदाताओ का बहुमत बन गया। क्या यह वास्तविक बहुमत कहा जा सकता हैं मेरे विचार से चुनाव आयोग को यह नियम बनाना चाहिये कि चुनाव पूर्व घोषित गठबंधन ही मान्य किया जायेगा। यदि चुनाव बाद कोई व्यक्ति दल छोडकर पार्टी मे आता है तो पुनः चुनाव लडकर जीतने के बाद ही शामिल किया जाये।

उत्तर– आप दोनो के ही प्रश्न अच्छे है। इस संबंध मे एक लेख मुख पृष्ठ पर छपा है । उसे पढकर फिर आप लिखियेगा। संविधान निर्माताओ ने सांसद को जन प्रतिनीधि के रूप मे मान्यता दी थी। संविधान मे न कही दल था न ही प्रशासन मे दल की कोई भुमिका। जन प्रतिनीधि को संसद मे अपनी बात रखने की पूर्ण स्वतंत्रता थी । लेकिन जन प्रतिनीधि से यह भी अपेक्षा

की जाती थी कि वह सम्पूर्ण देश की व्यवस्था के लिये नीति बनाने मे अपनी भूमिका अदा करेगा । धीरे धीरे लोकतंत्र विकृत होता गया। जन प्रतिनीधि अपने क्षेत्र के कार्यो तक सीमित होने लगे । लोक हित को भूलकर लोक प्रिय बनने की होड मची। दूसरी ओर राजनेताओ ने दल को महत्वपूर्ण बना बनाकर इतना प्रदूषित कर दिया कि यदि जन प्रतिनीधि संसद मे दल से अलग हटकर कोई बात कहना चाहे तो नही कह सकता । राजीव गांधी एक ऐसे कलंकित कार्य के लिये हमेशा इतिहास मे याद किये जायेगे कि उन्होने संविधान की इच्छा के विरूद्ध जाकर जन प्रतिनीधियो की संसद के भीतर की स्वतंत्रता भी छीन ली। आदर्श स्थिति तो यह होगी कि संविधान मे संशोधन करके दलीय व्यवस्था को आंतरिक मामला घोषित कर दिया जाये। और उसे संवैधानिक अधिकार प्राप्त न हो दूसरी ओर सांसद संसद मे स्वतंत्रता पूर्वक अपनी भूमिका अदा कर सके। शायद ऐसा होने से कुछ सुधार आ सकता है।

7 सिद्धाथ शर्मा कर्नाटक बैगलोर

वर्तमान काल में चरित्र की दो परिभाषाएं भारत में प्रचलित हैं। पहला कानून की दृष्टि वाला चरित्र, दूसरा सामाजिक दृष्टिकोण में चरित्र।

कानूनी चरित्र पर मेरा दावा है कि भारत की 99.9% आबादी फेल हो जायेगी क्योंकि कानून की नजर में तो सार्वजनिक स्थल पर बीड़ी पीनेवाला राहगीर भी दोषी पाया जाएगा!! वहीं सामाजिक नजरिये में बीड़ी पीने की तुलना में किसी शक्तिसम्पन्न व्यक्ति द्वारा किसी दुर्घटना ग्रस्त अशक्त की सहायता नहीं करना दोष माना जाएगा, जिसे कानून दोष नहीं मानता।

महाभारत कालीन समाज में द्रौपदी के चीर–हरण के समय भीष्म आदि का चुप रहना मान्य था पर आज का समाज तरूण तेजपाल प्रकरण में शोमा चौधरी की चुप्पी को गलत मान रहा है, भले ही कानूनी रूप से शोमा जी दोषी नहीं हैं।

ऐसे में उन सभी समूहों के लिए यह अत्यंत गम्भीर चिंतन का विषय है जो चरित्र को व्यवस्था परिवर्तन से अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं। यदि 'आप' चरित्र को ही महत्व देते रहेंगे तो तैयार हो जाइये कि चरित्रहीन लोग किसी भी रूप में चरित्रवान लोगों को सफल होने नहीं देंगे। वे कहीं न कहीं यह सिद्ध कर देंगे कि 'आप' भी उन्हीं की तरह नग्न हैं। भले वे सामाजिक रूप से इसे सिद्ध न कर पाएं, पर किसी दूसरे स्तर से तो सिद्ध कर ही देंगे।

इसका असर यह होगा कि चरित्रवान लोग हमेशा 'डिफेंसिव' दिखने लगेंगे, और उनकी ऊर्जा का एक बहुत बड़ा भाग अपने ऊपर दिन–रात लग रहे आरोपों का स्पष्टीकरण देने में ही व्यतीत हो जाएगा, भले व्यापक समाज उन्हें चरित्रवान ही क्यों न मानता हो।

इसके विपरीत यदि सज्जन लोग चरित्र के स्थान पर यह कहना शुरू करें कि हमारा चरित्र तो उसी स्तर का है जितना किसी आम आदमी का, और आम आदमी चरित्र निर्माण से अधिक इच्छुक हैं व्यवस्था परिवर्तन में क्योंकि वर्तमान व्यवस्था में उसकी सहभागिता शून्य है, तो चरित्रहीनों के दुष्चक्र से निकलने का यह सरल मार्ग भी होगा और उन्हें व्यवस्था परिवर्तन के अखाड़े में उतरने की मजबूरी भी हो जायेगी।

इस मार्ग को भारत के आम आदमी का भी पूरा समर्थन हासिल होगा क्योंकि उसकी सामूहिक इच्छा शक्ति भी व्यवस्था परिवर्तन और स्वराज की चाह कर रही है डिलेवरी चाहती है किसी से चरित्र के सर्टिफिकेट की नही।

उत्तर– मैने पिछले अंको मे यह लिखा कि नीति और चरित्र एक व्यक्ति के पास होना उचित है । परन्तु अनिवार्य नही। तानाशाही मे अथवा राजतंत्र मे दोनो को एक होना अनिवार्य माना जाता है किन्तु लोकतंत्र मे विधायिका और कार्यपालिका अलग अलग होते है। दोनो की कार्य प्रणाली भी भिन्न होती है, और योग्यताए भी । विधायिका का काम नीति निर्माण होता है।

और कार्यपालिका का काम उक्त नीति का कार्यान्वयन । विधायिका मे विचारो की प्रमुखता होती है, चरित्र गौण जबकि कार्यपालिका मे चरित्र प्रमुख होता है, विचार गौण। वर्तमान समय मे विधायिका ने लोकतंत्र को दूषित करके कार्यपालिका के काम मे भी हस्तक्षेप किया। स्वाभाविक है कि अर्ध तानाशाही का अनुभव होने लगा। आम लोग विधायिका मे भी चरित्र की अपेक्षा करने लगे। स्थिति यहां तक आई कि विधायिका नीति निर्धारण बहुत कम और कार्यान्वयन ज्यादा करने लगी।

हमारे धर्म गुरू भी नीति निर्धारण मे कम और कार्यान्वयन मे अधिक रूचि लेने लगे। वे भी चरित्र को ही महत्वपूर्ण मानने लगे। आज स्पष्ट दिख रहा है कि राजनेता भी चरित्र की बात कर रहे है और धर्मगुरू भी । इन्ही की बात सुनसुन कर समाज भी चरित्र की मांग करने लगा है। जबकि विचार महत्वपूर्ण होना चाहिये।

विचारो से नीतियां बनती है। नीतियों से व्यवस्था बनती है, व्यवस्था से चरित्र बनता है। दुर्भाग्य से विचारहीनता भी बढ रही है, और विचारको का भी अभाव हो रहा है। विचार करिये कि चरित्र कैसे बढेगा? कौन बनायेगा चरित्र? पिछले साठ वर्षो के स्वतंत्र भारत मे चरित्र बनाने के लिये भरपूर प्रयास किये गये । किन्तु न बनना था न बना। उल्टा चरित्र गिरता चला गया। क्योकि नीतियां गलत थी । और उनका दुष्प्रभाव चरित्र पर पड रहा था। मैने अपने जीवन के प्रारंभ से ही स्वयं को चरित्रवान कहने से दूरी बनाये रखी। मैने कभी स्वयं को एक नंम्बर का आदमी न माना न कहा। किन्तु मैने अपनी नीतियां ठीक रखी । मै समझता हूॅ कि आज अच्छे अच्छे चरित्रवानो की अपेक्षा मेरा प्रभाव अधिक पड रहा है।

व्यक्ति तीन प्रकार के होते है। 1 सामाजिक 2 असामाजिक 3 समाज विरोधी। किसी शक्ति सम्पन्न द्वारा दुर्घटना ग्रस्त असक्त की सहायता नही करना वर्तमान स्थिति मे दोष नही है। उस समय दोष था जब समाज मे अपराध बहुत कम थें। वर्तमान स्थिति मे सिर्फ दोषी वही है जो ऐसे असक्त व्यक्ति का सामान उठाकर ले जा रहा है। आज अरविन्द केजरीवाल अथवा अन्ना हजारे अपना अधिक समय केवल सफाई देने मे लगा रहे है। क्योकि उन्होने चरित्र को महत्वपूर्ण घोषित कर रखा है। यदि आप घोषित करेंगे कि आप उच्च स्तर के शाकाहारी है तो समाज के पेशेवर लोग आपसे प्रश्न करेंगे कि आखिर कार दूध भी तो एक प्रकार का मांसाहार है। इसलिये इस प्रकार के कार्यो मे अपनी शक्ति नही लगानी चाहिये। आपने जो लिखा है उसका मूल तत्व बहुत अच्छा है और इस दिशा मे बात आगे बढनी चाहिये।

श्री चिन्मय ब्यास माल देवता देहरादून

प्रश्न– पिछले चुनावो मे कांग्रेस पार्टी को 17 प्रतिशत और गठबंधन को मिलाकर 22 प्रतिशत वोट मिलेथें किन्तु इतना कम प्रतिशत पाकर भी वे प्रधान मंत्री बन गये। अब प्रधान मंत्री चुनने का तरीका बदला जाये। प्रधान मंत्री या तो सर्व सम्मत हो या इसने कम सर्वानुमति तो अवश्य हो । यदि आवश्यक हो तो निर्वाचित सांसद से बाहर का व्यक्ति भी प्रधान मंत्री बन सकता है। इसी तरह संसद मे प्रस्ताव पारित करने मे भी 51 और 49 की पद्धति ठीक नही है। या तो सर्व सम्मति हो या सर्वानुगति हो । कितने दुख की बात है कि आज छोटे छोटे मामलो मे भी न्यायालय को हस्तक्षेप करना पडता है, या मार्ग दर्शन देना पडता है। इसी तरह मीडिया को भी बहुत सक्रियता दिखानी पडती है। यह कोई अच्छी बात नही है। न्यायालय या मीडिया का हस्तक्षेप विशेष स्थिति मे ही होना चाहिये । सामान्यतया नही । हमारी न्याय प्रणाली मे भी बहुत खामिया है। गरीब अपढ तो विचारा न्याय पा ही नही सकता ।

मनमोहन सिंह जी अच्छे प्रधान मंत्री है। लोकतांत्रिक तरीके से काम करते है। किन्तु कांग्रेस की गलत नीतियों को अमल मे लाने के लिये मजबूर है। मनमोहन सिंह जी इतने उच्च कोटि के अर्थ शास्त्री है। किन्तु उन्ही के शासन काल मे भारत की आर्थिक हालत इतनी खराब हुई । पेट्रोल डीजल मे देश की आधी विदेशी मुद्रा खर्च हो रही है। तो दूसरी तरफ पेट्रोल डीजल चलित वाहनो का उत्पादन भी लगातार बढाया जा रहा है। ऐसा लगता है कि मनमोहन सिंह की अर्थनीति भारत के लिये हितकारी नही है। जहां तक मुझे ज्ञात है कि संविधान सभा के अध्यक्ष डा राजेन्द्र प्रसाद थें और ड्राफटिंग

कमेटी के चेयर मैन डा भीम राव अम्बेडकर थे। संविधान सभा के सदस्यो मे कई समाज सेवी न्यायविद राजनेता साहित्यकार आदि थे। सारा आलेख डा अम्बेडकर ने तैयार करके जब राजेन्द्र बाबु के समक्ष रखा तो राजेन्द्र बाबु ने कहा कि इस पूरे आलेख मे न कहीं गांधी है न स्वदेशी और न विकेन्द्रीयकरण। तब डा अम्बेडकर ने मन मसोस कर नीति निर्देशक सिद्धान्त का अध्याय जोडा था । नीति निर्देशक कार्य अनिवार्य नही है। राज्य सरकारो को सुविधा हो गई कि नीति निर्देशक सिद्धान्तो के जो अंश उनके लिये सुविधा जनक थे उन्हे धीरे धी शामिल कर लिया गया, और जो अंश समाज को सशक्त करने वाले थे उन्हे छोड दिया गया। गंभीरता से विचार करिये कि आज भारत मे लोकतंत्र है या लोक तंत्र के नाम पर दल तंत्र है। ऐसी स्थिति मे यदि बदलाव लाना हो तो मजबूत दबंग प्रधान मंत्री ज्यादा उपयुक्त हो सकता है राजतंत्र और डिक्टेटर शिप की अपनी बुराइया है। किन्तु यदि राजा लोक हित की भावना वाला समझदार व्यक्ति हो तो डिक्टेटर होना भी अच्छा ही है बुरा नही । सुभाष बाबू यदि आज डिक्टेटर बनकर शासन करते तो ऐसी समस्याए पैदा नही होती। हमे ऐसी सरकार चाहिये जो जनता के दैनिक जीवन मे कम से कम हस्तक्षेप करे। जो सरकार टैक्स कम लगावे वह सबसे अच्छी सरकार है। आज तो अनाज कपडा लकडी तक पर टैक्स लिया जा रहा है। यह कैसी सरकार है। सन सैतालीस से इक्यावन तक भारत मे एक सर्वदलीय सरकार थी और अच्छा काम कर रही थी अब भी यदि सर्वदलीय या दल विहीन मंत्री मंडल बनाने की पहल की जाय तो संभवत ज्यादा अच्छा प्रयोग हो सकता है। इसी तरह अभी नया तैलंगाना राज्य बनाकर आन्ध्र मे अनावश्यक टकराव पैदा किया गया। यह कोई अच्छी बात नही थी। नया राज्य बनाने के लिये पूरे राज्य मे जनमत संग्रह होना चाहिये था। जो नही हुआ। इस तरह कुछ मोटे मोटे सुधार करके लोकतंत्र को पटरी पर लाया जा सकता है।

उत्तर–आपने पांच मुख्य बाते लिखी है। पहला –प्रधान मंत्री सर्व सम्मति से या सर्वानुमति से ही चुना जाये। इसी तरह संसद मे प्रस्ताव भी बहुमत की जगह सर्वानुमति से पारित हो । दूसरा–न्यायालय या मीडिया का हस्तक्षेप घटना चाहिये। तीसरा– भारत को आज डिक्टेटर शिप की अधिक आवश्यकता है। चौथा–सरकार को समाज के मामलो मे कम से कम हस्तक्षेप करना चाहिये। पांचवा–छोटे राज्य बनाने के पहले जनमत संग्रह अनिवार्य किया जाय।

ऐसा लगता है कि आपने सोच समझकर ये प्रस्ताव नही दिये है, बल्कि सुनी सुनायी बातो पर आधारित दिखते है। सर्व सम्मति या सर्वानुमति होनी चाहिये। किन्तु ऐसा कोई कानून बनाना घातक होगा। मै इस बात से तो सहमत हूँ कि सर्व सम्मति का प्रयास किया जाये। किन्तु यदि प्रयास करने के बाद भी वैसा न हो तो कार्य ही रोक दिया जाये यह उचित नही है। आपने गांधीवादियों की रटी रटाई बात के प्रभाव मे ऐसा लिख दिया है। जबकि मैने तीस वर्ष पहले ही लिखा था कि–परिवार का मुखिया चुनते समय भी यदि सर्व सम्मति हो जाये तब भी गुप्त मतदान अवश्य होना चाहिये। मेरे विचार मे प्रधान मंत्री चुनते समय भी गुप्त मतदान अवश्य होने की परिपाटी विकसित करनी चाहिये। सरकार के कार्यो मे विधायिका के बढते हस्तक्षेप के कारण मजबूर होकर न्यायालय या मीडिया को बीच मे हस्तक्षेप करना पडा। यह कोई अच्छी बात नही है। किन्तु मजबूरी है। मै जानता हूँ कि जब न्यायालय को हस्तक्षेप करने का मजा आ जायेगा जैसा कि अभी हो रहा है तो न्यायालय का हस्तक्षेप भी बोझ बन जायेगा। किन्तु अभी तक विधायिका अपने चरित्र मे बदलाव नही ला रही है। इसलिये न्यायालय का हस्तक्षेप समाज को अच्छा लग रहा है।

तीसरे प्रस्ताव मे आपने डिक्टेटर शिप की प्रशंसा की है तो चौथे प्रस्ताव मे समाज के सामाजिक मामलो मे सरकार के न्यूनतम हस्तक्षेप की सलाह दी है। आपने दो विपरीत बाते लिख दी है। तानाशाही और तानाशाह के समाज व्यवस्था मे न्यूनतम हस्तक्षेप एक साथ कैसे संभव है। तानाशाही किसी बीमारी का आपरेशन तो हो सकता है किन्तु वह स्वास्थ्य लाभ के लिये टानिक का काम नही करता। क्या भारत मे ऐसी खराब स्थिति आ गयी है कि भारत तानाशाही की ओर जाये? निकम्मे लोग ऐसी मांग अधिक करते है। एक तरफ तो आप गांधी वादी है। दूसरी तरफ तानाशाही की वकालत करते है। आपने कभी नही सोचा कि गांधी के अहिंसक भारत मे गुजरात से ही इस तानाशाही की शुरूआत क्यो हुई? आपने अब तक लोक स्वराज्य को अव्यवस्था का विकल्प क्यो नही माना कि आप तानाशाही की वकालत करने लग गये । हमने तानशाही के

परिणाम सुने है। रूस मे भी सुने है, चीन मे भी सुने है और लीबिया इराक मे भी सुने है। तानाशाही से अव्यवस्था दूर होती है यह सही है किन्तु गुलामी भी निश्चित है यह भी सही है। आपने कहा कि तानाशाह अच्छा आदमी हो तो हर्ज नही है। मै आपसे जानना चाहता हूँ कि कोंई व्यक्ति तानाशाह होने के बाद बुरा हो जाये तो हम उसका क्या कर लेंगे? उसको हटाने का क्या तरीका होगा उस तरीके का भी उल्लेख करे। मेरे विचार मे आपको तानाशाही के समर्थन पर फिर से विचार करना चाहिये। मेरे विचार से वर्तमान समस्याओ का समाधान लोक स्वराजय मे है। यह लोक स्वराज्य तानाशाही का भी विकल्प है, और वर्तमान अव्यवस्था का भी समाधान है। आपने पॉचवे मुददे पर छोटे राज्य बनाने के लिए जनमत संग्रह की बात लिखी वह भी गंभीर नही लगी। यदि जनमत संग्रह होगा तो किस भाग मे होगा। आन्ध्र के किस भाग मे प्रस्तावित है। पूरे आन्ध्र मे होगा या सिर्फ अलग होने वाले क्षेत्र तेंलगाना मे। ऐसे गंभीर मसलो पर सोच समझकर सुझाव देना चाहिये । मैने कुछ प्रश्न उठाये है आपके उत्तर देने के बाद मै फिर से विचार करूंगा।